M.A-II - Sem IV

History EC - 3(C)

रैय्यतवारी भू-राजस्व प्रणाली

उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में स्थायी बंदोबस्त प्रणाली को दोषपूर्ण समझा जाने लगा। मद्रास प्रांत में यह व्यवस्था लोकप्रिय नहीं थी। 1792 ई० से 1802 ई० तक ईस्ट इंडिया कंपनी ने मद्रास प्रांत में सबसे धनी तथा श्रेष्ठ क्षेत्रों को अपने अधिकार में कर लिया। इन नए क्षेत्रों के अधिग्रहण के साथ यहाँ भूराजस्व प्रणाली कायम करनी थी।

1792 ई० में कैप्टन रीड और थॉमस मुनरो द्वारा रैय्यतवारी भू-राजस्व प्रणाली लागू की गई। इस प्रणाली के प्रवर्तक थॉमस मुनरो थे। 1820 ई० में जब वे मद्रास के गवर्नर बने, तब मद्रास के सभी प्रांतों में इसे लागू किया गया। बाद में महाराष्ट्र, तमिल-नाडु, आंध्रप्रदेश और आसाम में भी लागू किया गया। महाराष्ट्र में इसे गोल्डस्मिड (Goldsmid) और विंगेट (Wingate) के प्रयास से लागू हुआ।

सर थॉमस मुनरो कृषकों और सरकार के बीच सीधा संबंध रखना चाहते थे। इसलिए उन्होंने जमींदारी प्रणाली के प्रसार का विरोध किया। रैय्यतवारी भू-राजस्व का निर्धारण भूमि की कई वर्षों की उपज के औसत के आधार पर होता है। इसके लिए भूमि के सर्वेक्षण की आवश्यकता नहीं है। लगभग 20-30 वर्षों के उपरांत सरकार पुनः राजस्व को तय करती है और नए रूप में बंदोबस्त किया जाता है।

रैय्यतवारी भू-राजस्व

इसमें प्रत्येक भूमिधारी के लिए पृथक-पृथक लगान निश्चित की जाती है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत यद्यपि सम्पूर्ण भूमि पर राज्य का एकाधिकार होता था, किंतु व्यवहार में प्रत्येक रजिस्टर्ड भूधारी रैय्यत भूमि का स्वामी था। वह चाहे तो भूमि को बंधक रख सकता था या बेच भी सकता था। भूमि के अनुसार एक निश्चित समय के लिए लगान निश्चित किया जाता है।"

सर्वप्रथम 1792 ई० में भूराजस्व कुल उपज का 1/2 भाग निर्धारित किया गया, अवधि 30 वर्ष की थी जो कृषकों के लिए अत्यधिक था अतः थामस मुनरो ने 1807 ई० में भूराजस्व को घटाकर 1/3 भाग निर्धारित करने का प्रस्ताव रखा, जिसे कंपनी के संचालकों ने सहमति दे दी लेकिन रैय्यतों के लिए यह कष्टदायक सिद्ध हुई। यह राशि धन के रूप में बिना वार्षिक उपज या प्रचलित वस्तु दरों का ध्यान रखे वसूल की जाती थी। इस प्रणाली से रैय्यत की दशा अत्यंत दयनीय हो गई, क्योंकि भू राजस्व न देने पर उन्हें भूमि से बेदखल कर दिया जाता था, अतः वे स्थानीय महाजनों से ऋण लेकर कर्जदार होते गए। मद्रास में 1830, 1831 एवं 1832 ई० में अकाल, 1835 ई० से 1840 ई० तक अनावृष्टि के कारण रैय्यतों की दशा और भी सोचनीय हो गई। वे निर्धनता एवं ऋण के भार से पीड़ित रहे।

रैयतवारी भू-राजस्व

भू-राजस्व का रैयत के साथ निर्धारण का कार्य जिलाधीशों (Collectors) को सौंपा गया था, जिसे अपने जिले के लगभग 150,000 रैयतों (किसानों) से अनुबंध करना था। अतः राजस्व का निर्धारण न्यायोचित नहीं हुआ, क्योंकि निर्धारण के समय जो कृषक कृषि-उपज की बात बतलाने में सफल हुए उनका भूमि कर कम कर दिया गया। इससे भ्रष्टाचार पनपा।

मद्रास में रैयतों की स्थिति में सुधार लाने के लिए 1855 ई० में भूमि सर्वेक्षण और राजस्व व्यवस्था का कार्य प्रारंभ हुआ। इस बार राजस्व की दर में कमी लाने तथा कृषि के क्षेत्र में विस्तार करने के प्रश्न पर विचार किया गया। भू-राजस्व प्रणाली को पहले की तरह 30 वर्षों के लिए स्थायी कर दिया गया। मद्रास की तरह बम्बई में वहाँ के गवर्नर एल्फिन्स्टन तथा कमिश्नर चैपलिन के सहयोग से लागू किया गया। लेकिन इस बार भी व्यवस्था दुःखदायी सिद्ध हुई और किसानों पर पुनः भार पड़ गया।

इसके बावजूद भी इतिहासकारों ने इसका मूल्यांकन करते हुए कहा कि

रैय्यतवारी भू-राजस्व

इसमें कई गुण और दोष थे —

गुण :

(1) भूमि पर कृषक का स्वामित्व मानते हुए भू-राजस्व का अनुबंध सीधे रैय्यत से किया गया। इसमें मध्यस्थ का कोई स्थान नहीं था।

2) भू-राजस्व देते रहने तक भूमि पर उसका अधिकार था, अतः वह कृषि को उन्नत बनाने के लिए प्रेरित था।

3) यद्यपि भू-राजस्व की दर ऊँची थी, लेकिन इसकी अवधि स्थायी रूप से लंबी थी। अतः बार-बार वृद्धि की चिंता से वो मुक्त थी।

4) भू-राजस्व का निर्धारण ग्राम स्तर पर न होकर प्रत्येक खेत की उपज के आधार पर निर्धारित था। अतः राजस्व भूमि की उर्वरा शक्ति पर तय की गई थी।

5) ब्रिटिश सरकार ने इस सिद्धांत को स्वीकार किया कि उसका अधिकार भूमि की किराए की राशि नहीं बल्कि इसके अंश के रूप में भू-राजस्व है।

लेकिन इस प्रणाली में कुछ दोष भी अन्तर्निहित थे —

रैय्यतवारी भू-राजस्व

दोष:

1) यद्यपि मुनरो ने भू-राजस्व व्यवस्था में कटौती की यानी 1/2 से 1/3 भाग कर दिया, फिर भी रैय्यतों के लिए यह सामर्थ्य से बाहर थी। रैय्यत क्रमशः निर्धन होते गए।

2) यद्यपि भू-राजस्व के अनुबंध की अवधि लम्बी यानी 30 वर्ष की, लेकिन रैय्यतों को राहत नहीं मिली। वे सदैव राजस्व वृद्धि से सशंकित रहते थे। उनमें भूमि से लाभान्वित होने की लालसा समाप्त हो गई थी।

3) इस प्रणाली में भू-राजस्व के निर्धारण एवं उसकी वसूली में ग्राम पंचायतों की सर्वथा उपेक्षा की गई, जिसके कारण सरकारी कर्मचारियों द्वारा भू-राजस्व वसूल करते समय रैय्यतों पर अत्याचार किए जाते थे, उनसे कृषि उपज के संबंध में नहीं पूछा जाता था। वे निरंतर निर्धन होते चले गए।

इस प्रकार ग्रामीण जीवन अस्त-व्यस्त हो गई; खेतिहर राजस्व-अधिकारियों की निर्दयता के शिकार हुए। वे निर्दयतापूर्वक ऐसे समय में राजस्व की मांग करते थे, जब अकाल और महामारी फैली रहती थी। रैय्यतों के पास सरकारी देनदारियां चुकाने का कोई साधन नहीं था।

R. Kumari
Deptt of Hist